ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor (RJIF): 8.4
IJAR 2024; 10(3): 208-217
www.allresearchjournal.com
Received: 21-01-2024
Accepted: 26-02-2024

राखी
शोधार्थी,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
राखी
शोधार्थी,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली, भारत

अन्तर्वशी-टूटते हुए मूल्य और अंतर्मन की त्रासदी

राखी

प्रस्तावना

उषा प्रियंवदा का लगभग समूचा साहित्य अमरीकी समाज में रह रही भारतीय स्त्री का लेखा-जोखा है, जो पश्चिम की जीवन-शैली का पूरी तरह वरण न कर पाने के कारण द्वंद का शिकार बनती है। वह भारतीय मूल्यों में जकड़ी अपनी सोच एवं मानसिकता के कारण जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में मानसिक यंत्रणा झेलती है। दो संस्कृतियों के बीच संघर्ष करता उसका मानस उसे अनिर्णय की स्थितियों का भागी बनाता है। उसकी परम्परागत सोच, पुरुष पर निर्भरता और संस्कारों की बाधा न तो उसे मुक्ति द्वार की और पूरी तरह बढ़ने देती है और न ही वह विकट परिस्थितियों के सम्मुख समर्पण करने को तैयार है। रोहिणी अग्रवाल के शब्दों में- "अमेरिकी समाज का हिस्सा होकर भी उसे नकारते रहना उसकी दब्बू, पिछड़ी, आत्मकेन्द्रित रुग्ण मानसिकता का सूचक है, जिससे मुक्ति पाए बिना वक्त के साथ चलना संभव नहीं। चूंकि लेखिका भारतीय स्त्री की वैचारिक जड़ता से सर्वाधिक आक्रान्त है, इसलिए सबसे ज्यादा चोट वे इसी पर करती हैं।"[1]

इसमें में लेखिका ने स्त्री-मुक्ति एवं स्त्री-स्वातंत्र्य से जुड़े महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाए हैं। जैसे- स्त्री-मुक्ति की कामना एवं मुक्ति की प्राप्ति इस उपन्यास का केन्द्रीय बिन्दु है, जिसकी वाहिका है उपन्यास की नायिका 'वाना'। एक अति साधारण परिवार की लड़की, माँ के अभाव में गरीब पिता व बुआओं के संरक्षण में पली। दसवीं पास करने से पहले ही उससे बिना पूछे उसकी शादी अमेरिका में पी.एच.डी. कर रहे शिवेश से कर दी जाती है। उपन्यास में वाना का परिचय इन शब्दों में मिलता है- "नाम चुनमुन-पढ़ाई-लिखाई में ऐसी ही वैसी। चुनमुन उर्फ बंसरी, उर्फ वन श्री उर्फ वाना-वह बनारस वाली, साधारण सी म्युनिसिपैलिटी के स्कूल में पढ़ी और द्रारिद्रय में बड़ी हुई चुनमुन, बुआओं की चुनमुनिया, जिसके पास दूधिया रंग के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। किसी ने कहा था- बुद्धिहीन सुन्दर स्त्री क्या है अलोनी घुइया"[2]

वाना भले ही विवाह के पश्चात् अपने अतिसाधारण जीवन से मुक्ति पाकर अपने पति शिवेश के साथ अमेरिका आ जाती है, पर वहाँ जाकर उसका जीवन निराशा व असंतोष से भर जाता है। भले ही शिवेश ने उसे दो बेटों की माँ होने का सौभाग्य

प्रदान किया है तथा अमेरिका की संस्कृति के अनुरूप वह साड़ी छोड़, स्कर्ट-ब्लाउज़ पहन, कटे बालों, मेकअप वाले चेहरे में एकदम आधुनिका लगने लगी, लेकिन वह भीतर से पूरी तरह रिक्त है, असंतोष व आत्महीनता से जकड़ी हुई स्त्री है। शिवेश पी.एच.डी. करने के बरसों बाद भी 'जूनियर साइंटिस्ट' ही बना रहता है। उसे कहीं नौकरी नहीं मिलती। जब कि उसका सहपाठी व मित्र राहुल कम उम्र में ही पद, प्रतिष्ठा व पैसा सब कुछ पा लेता है। वाना के असंतोष का मुख्य कारण उसका आर्थिक अभावग्रस्त जीवन है। शिवेश की स्थाई नौकरी न होने की वजह से उन्हें क्रिस्तीन के घर उसकी कृपा पर रहना पड़ता है। क्रिस्तीन द्वारा घर बेच देने पर वाना व उसका पति राहुल के घर के एक हिस्से में रहते हुए राहुल पर आश्रित हो जाते हैं। राहुल भले ही शिवेश का परम मित्र है, उसका हितैषी व मददगार और शिवेश को राहुल पर यों आश्रित होने में कतई संकोच नहीं, लेकिन वाना में आत्महीनता का बोध गहराता जाता है। उसने शिवेश से शादी करने पर अतिसुविधा सम्पन्न जीवन के सपने देखे थे, लेकिन उसने पाया कि यथार्थ इसके बिल्कुल विपरीत है। वाना सोचती है-"मन में इच्छाएं और भी हैं। कितनी ढेर सारी इच्छाएं, जो दिन पर दिन बढ़ती ही जाती हैं। अपना निजी घर, अपनी गाड़ी, जो आए दिन धोखा न दे, समाज में सम्मान शिवेश की नौकरी, यह नहीं कि हर साल नए कांट्रैक्ट का इंतज़ार। इस विभाग से उस विभाग तक। इतना पैसा कि किसी चीज का दाम न पूछना पड़े। यात्राएं, जैसे कि लोग करते हैं-पैलेस ऑन व्हील, राजस्थान, कर्नाटक, केरल, हैलसियोन कॉसल, लन्दन, होनो लूलू"[3]

वाना के मन में एक और गहरी फ़ांस है। शिवेश जब राहुल के साथ वाना से शादी की बात पक्की करने आया था तो वाना ने खिड़की से अपने होने वाले दूल्हे को देखना वाहा था। शिवेश गाड़ी में बैठ चुका था, जबकि राहुल वाना के पिता से विदा ले रहा था। वाना ने राहुल को ही अपना होने वाला पति समझ लिया और वह उसकी सौम्यता पर मुग्ध हो गई थी, लेकिन डेढ़ साल बाद जब उसकी शादी अमेरिका से लौटे शिवेश से हुई तो वह मन मार कर रह गई थी। दो बच्चों की माँ बनने व शादी के कई साल बीत जाने पर भी वाना के मन में राहुल के प्रति चाह बनी रहती है। शिवेश का उपेक्षित व गैरजिम्मेदार व्यवहार, अभावों से उपजा असंतोष इस चाह को और भी बढ़ा देता है- "शिवेश से विमुख होने का असली कारण यह नहीं है। वाना जानती है कि इसके मूल में क्या है, पर वह होठों तक कैसे लाए? एक बार अगर उसने अपने से कह दिया तो फिर बन्द रास्ते के अंत में दीवार पर सर पटकने के अलावा और कोई चारा नहीं बचेगा। और उससे होगा भी क्या, स्वयं आहत और लहूलुहान होने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं।"[4]

वह राहुल की तुलना में शिवेश को अक्सर अति साधारण पाकर मन ही मन कुण्ठित हो उठती है। और सोचती है- "शिवेश और राहुल को देखो, साथ-साथ एम.एस-सी. पास किया, राहुल की स्मार्टनेस देखो और इन्हें। वह जीन्स और टूटे बटन वाली कमीज़ में भी कितना प्रभावित करता है और यह सूट में भी ऐसे ही लगते हैं, काम चलाऊ, कोई मुश्किल से कहेगा कि विदेश में रहते हैं।"[5]

यहाँ वाना की आत्महीनता उसकी निजी सीमाओं को इंगित करती है। शिक्षा पूरी न कर पाने के कारण पति पर आश्रित वाना अपनी क्षमताओं से अपरिचित है। दो बच्चों की देख-रेख करना, घर का कामकाज, आए दिन शिवेश के मित्रों की मेहमान नवाज़ी और अपनी इच्छा के विरुद्ध जब-तब शिवेश द्वारा कामपूर्ति उसकी घुटन को बढ़ा देते हैं, परंतु घुटन व मानसिक पीड़ा के बावजूद वह स्वयं को सुखी होने का अहसास दिलाती है। यह वाना के चरित्र का वह पक्ष है, जिसमें स्त्री 'विवाह, परिवार व पति' को ही अपने जीवन का उद्देश्य मान लेती है। स्वयं कुछ सीखने व करने की बजाय वह शिवेश को अच्छी नौकरी न पाने की वजह से मन ही मन कोसती है। उसके चरित्र का यह कमजोर पक्ष नारी मनोविज्ञान की उस ग्रंथि का साक्षी है, जो पुरुष की सफलता में ही अपने जीवन की सार्थकता खोजना चाहता है, क्योंकि वह अपनी इच्छाओं व भौतिक सुख-सुविधाओं की पूर्ति के लिए पूरी तरह पति पर निर्भर होती है। एक आम औरत की तरह वाना को भी अच्छा घर, महंगे कपड़े, ज़ेवर व अन्य सुख-सुविधाओं की चाह है। अपने साथ की सम्पन्न हिन्दुस्तानी औरतों को देख वह और भी निराश होती है। कभी उसके गिने-चुने स्कर्ट, ब्लाउज़ व गिनती की साड़ियां उसे कोंचते हैं तो कभी शादी के इतने साल बाद भी नाक के लिए हीरे की एक छोटी सी लौंग खरीद पाने का अभाव उसे पीड़ा देता है। अगर वह शिक्षित व आत्मनिर्भर होती तो इस पीड़ा से उबर सकती थी, परंतु वह आकाश-विकास की माँ तथा शिवेश की पत्नी मात्र होकर रह जाती है। अपनी बंधी-

बंधाई ज़िंदगी से मुक्त होने का कोई सार्थक विकल्प नहीं ढूंढ पाती। उसमें अपनी क्षमताओं को विकसित कर कुछ आगे कर पाने की न तो इच्छा है और न ही साहस। लेकिन भौतिक इच्छाएं हैं कि दिन- प्रति बढ़ती ही जाती हैं जिस पर उसका कोई अधिकार ही नहीं है- "वाना इस घर की चौखट से बाहर कैसे निकले? सबसे पहला प्रश्न तो यही है। सच बात तो यह है कि पढ़ाई-लिखाई उसके बस की नहीं। यह चाहती है कि शिवेश लाइन पर लगें, राहुल की तरह कहीं पक्की नौकरी लगें; फिर खरीदें गाड़ी और घर; वाना जो मन में आए वही शापिंग करें, हर साल बनारस वापिस जाए। आठ बड़े-बड़े सूटकेसों में खचाखच सामान ठूंस कर। ठीक है, भारत में सब कुछ मिलता है पर अपनी समृद्धि की नुमायश करने का भी एक सुख होता है। क्या यह सब इच्छाएं ऐसी अनहोनी, असंभव हैं। उसे शिवेश पर झुंझलाहट होती है। सुनती है कि दूसरे पोस्ट डॉक्टर; अंजनेमल, नागार्जुन, वामदेव, संजय रात-रात भर लैब में बैठ कर काम करते हैं। शिवेश नी से पांच तक। सप्ताहांत खाली । खाना खाया, अखबार पढ़ा, बीबी को प्यार किया और सो गए। इसी में संतुष्ट हैं-इसके आगे कोई महत्त्वाकांक्षा नहीं है!"[6]

इस सन्दर्भ में रेखा कस्तवार लिखती है कि- "पुरुष की वंश-परम्परा के फूलने-फलने का साधन बनी स्त्री का महिमा जीवन साहित्य में नया नहीं। स्त्री जीवन की पूर्णता को मातृत्व से जोड़कर देखा गया है की इतनी कंडीशनिंग होती जा रही है कि स्त्री ने मातृत्व के बिना अपने जीवन को व्यर्थ समझ लिया है। स्त्री के जीवन में सृजन के अवसर मातृत्व से अभिव्यक्त होते रहे हैं। पति के बच्चों की माँ बनकर अपने सौभाग्य पर प्रसन्न होती स्त्री किसी अन्य सृजन के बारे में न सोचती है न ही सोचने का अवसर उसे प्राप्त होता है। मातृत्व स्त्री का अधिकार है, परंतु इस अधिकार का प्रयोग वह अपने बच्चे के लिए जब-जब करती है तब-तब उसे प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है।"[7]

'अन्तर्वशी' की वाना की स्थिति ठीक यही है। शिवेश उसकी इच्छा के विरुद्ध तीसरा बच्चा पैदा करना चाहता है। वाना एक ओर मन ही मन इसका विरोध करती है, दूसरी ओर अपनी परम्परागत मानसिकता के कारण मातृत्व में ही अपने जीवन की सम्पूर्णता महसूस करती है। उसे 'सूरज-चन्दा', 'हीरे मोती' तथा 'सोना- चाँदी' जैसे अपने बेटों आकाश-विकास के आगे कुछ नहीं सूझता। अमेरिका में रहते-रहते भले ही वाना के पहनने-ओढ़ने में परिवर्तन आ गया हो, लेकिन भीतर से वह एक साधारण स्त्री है- "वाना की अंग्रेजी भी नाम और पहनावे के अनुरूप ढल गई है। शत-प्रतिशत् अमेरिकन। फोन पर सुनो तो पहचान भी न सकी कि यह वन श्री है, बनारस वाली वन श्री, आकाश-विकास की अम्मा, शिवेश मिश्र की बीबी।"[8]

वाना स्वयं भी सोचती है कि बाहर से कुछ भी बदले, मगर अन्दर से मन तो भारतीय ही रहता है और ऊपर की त्वचा भी। जीवन के प्रति मूक समर्पण वाना को सालता रहता है। शिवेश के लिए वह केवल उसके बेटों की माँ है और यौन सुख का एक स्थायी साधन। शिवेश वाना पर अपना पूर्णाधिकार जमाते हुए उसकी इच्छा के विरुद्ध उसे जब-तब भोगना चाहता है। वाना के लिए उस संबंध में न तो देह सुख के लिए कोई अवकाश है और न ही किसी प्रकार की आत्मतृप्ति। फिर भी वह मूक बनी रह कर सब कुछ सहती है –"शिवेश की लम्बी सांसें शिवेश का शरीर उसे रौंद रहा है। वाना समर्पित है। यही उसकी नियति है। यही पत्नीत्व की परिणति। उसकी पलकें फड़फड़ाती हैं। उसके पुतलियां आधी ढकी पलकों से छत को ताकती हैं... वाना एकदम से महसूस करती है कि उसका पति उसे प्यार कर रहा है और वह स्वयं अपने शरीर से कितनी अलग हो आई है।"[9]

आए दिन अपने पति का आग्रह टालने का साहस वाना में नहीं है। उसकी पीड़ा यह है कि पति-पत्नी के इस अंतरंग संबंध में उसके लिए कुछ भी उपस्थित नहीं- "वाना मन ही मन विद्रोह कर रही है, कितनी हड़बड़ी रहती है इन्हें, जुट जाते हैं अपने सुख में। पूरा कपड़ा अलग करने का समय भी नहीं लेते। मेरा भी शरीर है।। उसे भी दुलार की मांग है। नहीं, मैं पत्नी हूँ, झुलाने, खिलाने, झेलने के लिए।"[10]

देह सुख के अलावा तीसरा बच्चा पैदा करने के फैसले पर भी वाना का कोई अधिकार नहीं है- "गुनगुने पानी की फुहार के नीचे खड़े-खड़े वह सोच रही है क्या करे? शिवेश तो मानने वाले है नहीं, जल्दी से तीसरा- मुझे अभी नया शिशु नहीं चाहिए। कहे भी तो किससे? कहाँ जाए ? शिवेश से कहेगी कि डॉक्टर के पास तो चलो तो वह सुनेंगे? टाल देंगे, जैसे कि मर्जी से खिलाफ बातें अनसुनी कर देते हैं।"[11]

रेखा कस्तवार अपने लेख 'अकेली स्त्री' में कहती है- "विवाह स्त्री को उसकी देह और श्रम के बदले जीवन भर के लिए रोटी, कपड़ा और छत मुहैया कराता है और देता

है, बाहरी पुरुष से सुरक्षा का आश्वासन (?) और वापिस नहीं लेता है उसकी 'आत्म'। 'आत्म' जो बचपन से ही बनने नहीं दिया जाता। इस अजाने 'आत्म' के अभाव का ही परिणाम है कि स्त्री शिक्षित और कई बार स्वावलंबी होकर भी 'पिता-पति-पुत्र' पर निर्भर रहने के संस्कार और परपंरा में जकड़ी रहती है । सुरक्षा (?) और सम्मान (?) के वदले में व्यक्तिगत जीवन जीने का दुस्साहस नहीं करती। 'व्यक्ति जीवन' जीने का दुस्साहस न कर पाने का और परिवार से मिलने वाली सुरक्षा की मोहताजी का महत्त्वपूर्ण कारण उसका 'नाकमाऊ' समझा जाना है। जिसके पास अर्च है, शक्ति-सुरक्षा के स्रोत उसी के पास केन्द्रित हो जाते हैं। जो पुरुष को आर्थिक सुरक्षा देता है, वही उसे हस्तगत कर लेता है, अपने सारे अधिकार स्त्री पर सुरक्षित समझता है। यह जानता है कि मातृत्व और मानव शिशु की देखभाल की लम्बी अवधि स्त्री की घर तक सीमित करती है। उबाऊ, बकाऊ, यरेलू यम में रवी अपनी जिदगी खत्म कर देती है, जिसका न कोई मूल्य दिया जाता है न आंका जाता है।"[12]

वाना को अपने 'आत्म' का बोध शालिनी, सारिका एवं क्रिस्तीन की प्रेरणा से होता है। शालिनी व सारिका 'मुक्त भारतीय नारी' का प्रतिनिधित्व करती हैं। शालिनी पी.एच.डी. करने के बाद शिकागो के नारी-उत्थान संस्थान 'आसरा' में विशेषज्ञ है और उसकी मौसेरी बहन सारिका डॉक्टर। दोनों आत्मनिर्भर एवं आधुनिक व स्वतंत्र विचारधारा की हैं। उन्हें देख वाना को सहज ही आत्महीनता का अहसास होता है- "दोनों उसी की उम्र की होंगी- वाना सोचती है। कुंवारी, उन्मुक्त, सहज, पैसे वाली, कामकाजी, मेरे दो बेटे, आकाश और विकास, मेरे पति शिवेश, कभी नौकरी है कभी नहीं, मंगनी का मकान, रसोई में पतीली में मक्खनी दाल, साबुत गोभी और खुदबुद दो कटे हुए मुर्गे- वाना अक्सर सोचती है कि शालिनी, सारिका और उसका क्या साथ? दो-दो बच्चे, उनका काम, फिर सारे घर का काम, वह अपने मोटे-गदबदे पति को उनकी दृष्टि से देखती है।"[13] शालिनी बातचीत के दौरान अमेरिका में कई सालों से रह रहे भारतीय परिवारों में पुरुष की प्रताड़ना सहने वाली औरतों की चर्चा करती है- "यहाँ तो जैसे कोई मर्यादा, कोई सीमा ही नहीं है। हम जो सोच भी नहीं सकते, ऐसे-ऐसे केस हमारे यहाँ आते हैं। औरतों को पति की मार और अमरीकी संस्कृति में बड़े हो रहे बच्चों का तिरस्कार दोनों झेलना पड़ता है।"[14] शालिनी वाना की स्थिति से परिचित है। वाना के प्रति शालिनी की सहानुभूति व उसे घुटन-भरी ज़िंदगी व शिवेश की दासता से मुक्त करवाने की इच्छा उसके इन शब्दों में सहज ही प्रकट हुई है- "क्या तुम शिवेश की दिन रात हाज़िरी नहीं बजाती हो? शिवेश की मर्जी शिरोधार्य। सच कहना वाना भाभी, तीन सालों में तुमने कभी किसी बात पर 'ना' कहा है? अपने अधिकारों का ज्ञान ही न हो तो उनका उपयोग कैसे होगा। सॉरी भाभी! मैं हर जगह भाषण देने लगती हूं, क्या करूं, रहा नहीं जाता। सामने, दूर खुला क्षितिज है और हम अपने को बंधनों में जकड़ लेते हैं। हम जानते ही नहीं अपनी ताकत को।"[15]

शालिनी की बातें सुनकर वाना के भीतर दबा प्रतिरोध प्रकट होने लगता है। वह बच्चों के बड़े होने पर नौकरी करने की बात करती है, अंग्रेज़ी सीखने की सोचती है। सारिका का वाना के घर पर पेईंग गेस्ट के तौर पर रहने के लिए आना वाना के जीवन का 'टर्निंग प्वाइंट' साबित होता है। सारिका भी वाना को अंग्रेज़ी सीखने व आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रेरित करती है। वह वाना को आत्महीनता से उबर कर उसे नई संभावनाओं की ओर उन्मुख करना चाहती है। वाना के भीतर आत्मनिर्भर होने की भावना प्रबल होने लगती है, पर वह जानती है कि यह सब शिवेश को पसन्द नहीं है। सारिका यह जानकर अक्सर उस पर खीझती है- "उफ! वाना! यह ज़िंदगी है किसकी? तुम्हारी न? यह शरीर किसका है? किसने दो-दो बच्चों को जन्म दिया है? तुम्हें अपने जीवन पर उतना ही अधिकार है, जितना शिवेश को।"[16] सारिका वाना को गर्भ निरोधक गोलियाँ नुस्खा देकर उसे कम्युनिटी कॉलेज में पढ़ने के सारे कोर्स का कैटलोंग उपलब्ध करवाती है और उसे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। यह वाना के जीवन के अंधेरे बंद कमरे में एक खिड़की के खुलने के समान है, जहाँ से वाना एक अन्तहीन आकाश को देखने की शुरुआत करती है। सारिका उसे बार-बार याद दिलाती है- "यह जो वाना है, इसके भीतर तो कुछ निजी आयाम है, कुछ चाहें, कुछ सपने नहीं? तो फिर क्यों इन्हें दफन कर दिया जाए? आकाश, विकास, शिवेश; यह जेलर तो नहीं इनके साथ अपने लिए कुछ और भी किया जा सकता है। वाना! अपने सपनों का पीछा करो।"[17]

वाना शिवेश से चोरी-चोरी गर्भ निरोधक गोलियाँ खाती है। तीसरा बच्चा पैदा न करने की प्रबल इच्छा उसे 'शिवेश के खिलाफ़ कदम या अनचाहा बच्चा' जनने के विरुद्ध खड़ा कर देती है। वाना का अन्तर्द्वन्द्व एक ओर उसे विद्रोह के लिए प्रेरित करता है। तो दूसरी ओर वह अपने संस्कारों व परम्परागत सोच में बंधी रहकर अपने पारिवारिक जीवन में ही तुष्टि पाती है वाना निछावर हो उठती है- "सारिका या दूसरे क्या जानें यह गहरा तोष, अपना जाया बाहों में लेकर वक्ष से सटाने का सुख-मैं इस समय सुखी हूं- वह अपने को जता रही है।"[18]

इस उपन्यास की दूसरी स्त्री पात्र 'सारिका' शिक्षित, आत्मनिर्भर तथा स्वाभिमानी युवती है। वह अपने डॉक्टर प्रेमी जहाँगीर मलिक से दूर अमेरिका में तीन साल के लिए डॉक्टरी की प्रैक्टिस के लिए आती है। उसका सपना है कि वह भारत लौटकर अपना क्लीनिक खोलेगी और जहाँगीर मलिक से शादी कर सुखद वैवाहिक जीवन का आंनद लेगी। जहाँगीर मलिक की बचपन में अपनी एक चचेरी बहन से शादी तय हो गई थी लेकिन रुखसती नहीं हुई थी। सारिका का पूरा विश्वास था कि जहाँगीर के लिए उस शादी का कोई महत्त्व नहीं है और वह उसी को ही अपनी जीवन संगिनी बनाएगा, लेकिन जहाँगीर दुबई में रहने वाले अमीर खानदान की अपनी चचेरी बहन से विवाह कर लेता है और विवाह के बावजूद चाहता है कि सारिका उसकी ज़िंदगी में बनी रहे। सारिका स्वतंत्र, आत्मसजग, आधुनिक एवं स्वाभिमानी है। उसे जहांगीर का निर्णय पूरी तरह तोड़ देता है पर वह उसकी इच्छा की गुलाम बनना स्वीकार नहीं करती। वह वाना से कहती है- "मैंने उनसे कह दिया कि मैं एक बेकसूर औरत का हक नहीं छीनना चाहती और तोड़ दिया रिश्ता! मेरी भी इज्ज़त है, आत्म सम्मान है। घमण्ड है मुझे अपने प्यार पर। मैं सांझा नहीं कर सकती। इस पार या उस पार।"[19] सारिका इस घटना के बाद भारत लौटना चाहती है ताकि अपने कैरियर एवं भविष्य के बारे में निर्णय ले सके। भले ही वह इस पीड़ा से टूट जाती है, लेकिन वह जल्दी ही इस दुखद घटना से उबरना भी चाहती है। वह अपने अस्तित्व के बोध के कारण स्वयं को अवरुद्ध नहीं करना चाहती। वह वाना से स्पष्ट शब्दों में कहती है- "वह अध्याय तो समाप्त हो गया वाना। मैं अपने लिए लौट रही हूँ, मैं एक बिन्दु पर अटक कर नहीं रह जाना चाहती, मुझे और काम करने हैं। मेरी जिंदगी को नई गति चाहिए। मेरे लिए तो सब कुछ वहीं है। मेरा भविष्य, मेरी महत्त्वाकांक्षाएं, माँ-बाप। अपने देश को कुछ वापिस देना चाहती हूँ। रहे जहाँगीर मलिक, तो उन्होंने अपना रास्ता उसी दिन बदल लिया जिस दिन दुल्हन की रुखसती करा लाए। मुझे उनसे कोई शिकायत नहीं है, न कोई आशा।"[20] वाना के यह कहने पर कि यदि जहाँगीर सारिका के पास लौटना चाहे तो वह उसे इन्कार न करे, सारिका कहती है- "कितनी भोली हो तुम वाना! जिंदगी कोई फिल्मों की कहानी नहीं है, जिसमें अन्त में सब ठीक हो जाएगा।"[21]

यहाँ स्पष्ट हो जाता है की वाना भारतीय परिवेश को नही छोड़ पाई है,और इतना सब कुछ होने पर भी वह पुरुष को माफ़ करने के बारे में सोचती है। इसलिए वाना के भोलेपन को देखते हुए सारिका उससे वायदा लेती है कि वह उसके भारत लौटने के बाद गृहिणी मात्र न बनी रहकर आगे कुछ सीख कर आत्मनिर्भर बनेगी और अपने व्यक्तित्व को एक नई दिशा देगी। वाना के मन में सारिका की बातें घर कर जाती हैं। दुर्भाग्यवश भारत लौटने से दो-तीन दिन पहले वाना की आंखों के सामने एक पोस्ट ऑफिस में एक पागल व्यक्ति द्वारा की गई अंधाधुंध गोलीबारी में सारिका की मृत्यु हो जाती है। वाना यह सदमा सहन नहीं कर पाती और अर्धविक्षिप्तावस्था में रोने-चिल्लाने लगती है। उसका मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है। वह आक्रोश से भर उठती है, चीजें तोड़ देती है, बच्चों को अपने से परे धकेलती रहती है और शिवेश के प्रति भी पहली सी आज्ञाकारिणी पत्नी नहीं रहती। सारिका की हत्या से वाना के भीतर बरसों से दबा गुस्सा, अभाव, निराशा व आक्रोश एक लावे के रूप में फूट पड़ता है। मनोवैज्ञानिक डॉ.कुमार वाना का इलाज करने घर आते हैं व राहुल तथा शिवेश के सम्मुख वाना की मानसिक स्थिति स्पष्ट करते हैं। शिवेश एक उथला एवं संवेदनहीन व्यक्ति है। बरसों से वाना के साथ रहकर भी वह उसे कभी भीतर से नहीं जान पाया, क्योंकि उसके 'पुरुषत्व' ने वाना को केवल अपने बच्चों की माँ, अपनी पत्नी व घर के लिए ज़िम्मेदार मात्र समझा है। वह वाना की मानसिक स्थिति पर हैरान होकर वह डॉ. कुमार से कहता है- पर सारिका तो केवल हमारी प्रेइंग गेस्ट थी। उसकी मौत पर इतना दुख ? राहुल और डॉ० कुमार दोनों शिवेश का मुंह ताकने लगते हैं। कितनी क्षुद्र बात कह दी है शिवेश ने। इन्हें मालूम भी नहीं कि मुंह से क्या निकल रहा है। कभी-कभी एक छोटी सी घटना हमारे बरसों से दबे भावों को प्रकट करने लगती है। वह तो बड़ी बात है।

किसी को अपने सामने दम तोड़ते देखना सहज नहीं है। जाने कितना क्रोध, कितना आक्रोश वाना के अन्दर जमा होगा, जो अब हम देख रहे हैं। डॉ. कुमार कहते हैं। कैसा क्रोध? किस बात पर क्रोध? किसके प्रति डॉ. कुमार ? उसके पास तो सभी कुछ है। बच्चे, वह बहुत सुखी है। मैं यह जानता हूँ। शिवेश अपने दिल पर हाथ रखते हैं। किसके प्रति क्रोध, शिवेश ने फिर कहा- "भगवान के प्रति, लोगों के प्रति, समाज के प्रति और अपनी निरुपायता, कुछ न कर पाने के प्रति। कभी-कभी मरने वाले के प्रति भी, जो अचानक हमें छोड़ कर चला जाता है।"[22]

डॉ. कुमार का वाना के संबंध में विश्लेषण सही है। वाना के मन में बचपन से लेकर अब तक हर विकट परिस्थिति, अभाव एवं अपनी विवशता के प्रति विद्रोह है और उसके भीतर दबी विद्रोह की सबसे बड़ी भावना शिवेश के प्रति है, जिसे वह सामान्य मानसिक स्थिति में कभी प्रकट नहीं कर पाई। ऐसे में वाना की प्रतिक्रिया स्वाभाविक है। राजकिशोर के अनुसार- "जहाँ भी अधीनता होगी, वहीं विद्रोह के बीच मिलेंगे। मनुष्य आखिरकार मनुष्य है। वह बराबर अपनी स्थिति को बेहतर बनाने की कोशिश करता है। इसके लिए वह समझौता भी करता है और संघर्ष भी। स्त्री ने भी कभी समझौते के रास्ते से पुरुष पर विजय पाने की कोशिश की है और कभी संघर्ष से।"[23] शिवेश से बरसों से समझौता करती आई वाना की स्थिति अब संघर्ष करने की है। अब वह शिवेश की हर बात को चुपचाप स्वीकारने वाली, हाँ में हाँ मिलाने वाली वाना नहीं है। वाना में आए परिवर्तन से शिवेश की दुनिया बिखर जाती है। वह वाना को घर गृहस्थी की नई-नई चीजें खरीदवा कर उसका हृदय जीतना चाहता है। बच्चों के काम काज की कई ज़िम्मेदारियां अपने सिर ले लेता है। लेकिन वाना शिवेश के इन सब प्रयत्नों से तनिक भी खुश नहीं होती। उसे शिवेश की नासमझी पर और भी दुख होता है।

आगे फिर राजकिशोर कहते है- "पुरुष को स्त्री पर सिर्फ अधिकार नहीं चाहिए, इस अधिकार की साफ-साफ घोषणा भी चाहिए। ज़ाहिर है यह अधिकार भाव बहुत कुछ वस्तुओं पर उसके अधिकार से मिलता-जुलता है। वस्तुएं अधिकार का सबसे सुंदर पात्र हैं, क्योंकि वे कुछ बोल नहीं सकतीं, जो उन्हें कब्ज़े में कर ले, वे पूर्णतः उसी की हो जाती हैं। स्त्री के साथ मुश्किल है कि उसमें चेतना है, चेतना है यानि उसकी अपनी एक अस्मिता है। पुरुष की एक प्रधान चिंता यह रही है कि इस अस्मिता को कैसे खत्म किया जाए।"[24] उपन्यास में शिवेश ने भी वाना को सिर्फ वस्तु के रूप में ही जाना है। एक हाड़-मांस की बनी वस्तु, जो हमेशा उसकी बात का पालन करती, घर-गृहस्थी में खपी हुई, आकांक्षाहीन, आत्महीनता के बोध से दबी वाना, जिसे शिवेश ने केवल और केवल दैहिक सुख-साधन के रूप में जाना है। इसके अतिरिक्त वह उसे कुछ न समझ पाया।

उपभोक्तावाद और बाज़ारबाद व्यक्ति को वस्तु में बदल देता है, मानवीय संवेदनशीलता और सरोकार आत्मतुष्टि पर आकर चुक जाते हैं और मनुष्य पहले पहचान-विहीन व्यक्ति बनते हैं और फिर वस्तुओं से मिलने वाले, सुख देने वाली माध्यमभूत वस्तुएं। श्रीनरेश मेहता ने अपनी पुस्तक 'मुक्तिबोधः एक अवधूत कविता' में व्यक्ति के 'वस्तु' बन जाने को एक भयानक त्रासदी कहा है- "वस्तुएं जब व्यक्ति बन जाती हैं तो जीवन उत्सव हो जाता है पर व्यक्ति जब वस्तु बन जाता है तब जीवन नरक हो जाता है।"[25] रेखा कस्तवार के अनुसार- "पुरुष सत्ता स्त्री के व्यक्तित्व को देह केन्द्रित बनाकर मनमाना सलूक करती रही है, किंतु जब यही बात स्त्री ने अपने अधिकार सुरक्षित रखते हुए करनी चाही, जनसंख्या नियंत्रण के उपकरणों को कामना पूर्ति के लिए उपयोग में लाना प्रारम्भ किया, पितृसत्ता का परेशान होना लाज़िमी था। अन्य प्रश्नों की भांति स्त्री देह के प्रति दोहरी मानसिकता ने स्त्री देह के प्रश्न को जटिल तो बनाया ही है, स्त्री के खिलाफ उपभोग को संभव बनाया है।"[26]

शिवेश द्वारा स्वयं को 'भोग की वस्तु' के रूप में बरसों प्रयोग करने से घुटती वाना को जब अपनी अस्मिता का अहसास होता है तो वह अपनी देह का अधिकार स्वयं के पास सुरक्षित रखना चाहती है। अपनी देह के प्रति अपने अधिकार का प्रयोग भी स्त्री-मुक्ति का एक महत्त्वपूर्ण आयाम है। वाना द्वारा इस अधिकार का प्रयोग करना शिवेश के अहंकार पर गहरी चोट करता है। वाना अब उसकी इच्छा पूर्ति का साधन नहीं रहती- "शैया पर हाथ भर छू जाए, वाना फुफकराने लगती है 'मत छुओ मुझे'। जाकर पहले नसबंदी करा लो तब आना। कहां गई वह समर्पित पत्नी-कौन आ गई है उसकी जगह। शिवेश इस वाना को नहीं पहचानने। फिर भी निरन्तर प्रश्न करते रहते हैं।"[27]

वाना का चरित्र गढ़ते हुए उपन्यासकार ने स्त्री-मुक्ति के उन अनेक पक्षों का भी उद्‌द्घाटन करती हैं, जो पश्चिमी

संस्कृति व जीवन-शैली की देन हैं। उपन्यास में सारिका की तरह वाना को आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रेरित करने वाली अमेरिकन युवती 'क्रिस्तीन' से वाना के लेस्बिनय संबंधों का 'बोल्ड' चित्रण सुसभ्य अमेरिका समाज की अंतरंग परतों को उघाड़ता है। लेखिका ने अनु को ऐसे संबंध में ढालने के लिए पूरी तरह अमेरिकन रंग में रंग दिया है। वाना की ऊंची स्कर्ट कसी हुई जैकेट, पलकों पर आई शैडो, होंठो पर लिपस्टिक और खूबसूरत हेयर कट। शिवेश से उदासीन व अर्थहीन जीवन ढोने वाली वाना के लिए क्रिस्तीन के साथ देह-सुख पाना एक नितान्त नया अनुभव है, जिसे वह सहज ही स्वीकार कर लेती है। वाना क्रिस्तीन से प्राप्त देह सुख से अचम्भित है। सोचती है- "स्त्री शरीर! निर्वस्त्र नग्न! कितना सुन्दर; कितनी विचित्र बात है कि वह पुरुषों को भी आकर्षित करता है और स्त्रियों को भी। देह सुख के लिए पुरुष की आवश्यकता नहीं, वह केवल संतान के लिए चाहिए। वाना अकेले बैठे-बैठे सोच रही है। वर्जना किसने की, पुरुषों ने ही न। अपना दावा, अपना ठप्पा कायम करने के लिए।"[28] लेखिका ने वाना की क्रिस्तीन के साथ यौन संबंधों की सहज स्वीकृति के माध्यम से मानो वाना को शिवेश की यौन दैहिकता से मुक्ति दिलाई है ,निरंतर राहुल की ओर आकृष्ट वाना क्रिस्तीन से यौन-संबंध स्थापित करने के गहरे व मीठे अनुभव के बाद भी जानती है कि उसकी प्रवृत्ति समलिंगी नहीं है। उस समय उसे अवश्य क्रिस्तीन ने आकर्षित और उत्तेजित किया था।

उषा प्रियंवदा द्वारा चित्रित यह दैहिक यथार्थ पश्चिमी समाज के लिए तो सहज और प्रामाणिक अनुभव हो सकता है, लेकिन भारतीय समाज के लिए शायद नहीं। प्रभा खेतान का इस संदर्भ में मानना है कि- "स्त्री मुक्ति आंदोलन को महज़ स्त्री की किसी एक भूमिका में न्यूनीकृत नहीं किया जा सकता। राजनीतिक दृष्टि से ही सही, यौनिकता को संहिताबद्ध करना संभव भी नहीं, क्योंकि स्त्री को दमन से मुक्त करने हेतु भिन्न यौन संसर्गों को भी महत्त्व देना होगा, पहचान देनी होगी। 'लेस्बियन' और 'गे' स्त्री-पुरुष नारीवादी आन्दोलन को सक्रिय करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं, किंतु इत्तरलिंगी व्यवस्था की आलोचना करने का अर्थ यह नहीं कि इतर लिंगी आचरण को खारिज ही कर दिया जाए।"[29]

यौन संसर्गों को स्त्री-मुक्ति के एक आयाम के रूप में महत्त्व देना व उनकी सही समीक्षा का प्रश्न समकालीन लेखकों के लिए एक बड़ी चुनौती के रूप में उभरा है। परन्तु सामाजिक यथार्थ को दर्ज करना भी अतिअवशक है क्योंकि कई बार भारतीय स्त्रियां यथार्थ और स्वप्न में ही झूलती हुई मिलती है। अब ये रचनाकार पर निर्भर करता है कि समाज के समक्ष क्या प्रस्तुत कर रहा है नग्न यथार्थ या आदर्शवादी स्वप्न। नामवर सिंह के अनुसार- "हमें साहित्य में सामाजिक यथार्थ का दर्ज करने का पूरा हक है, पर यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि सैक्स से जुड़ी विकृतियों को साहित्य में हम 'एबिरेशन के तौर पर ही दिखाएं, उन्हें नार्म के रूप में स्थापित कर सस्ती लोकप्रियता बटोरने का प्रत्यन न करे। विकृतियों को संदिग्ध निगाह से देखा जाना चाहिए... जैसे समलैंगिकता की बहस है। यह तो मानना ही होगा कि समलैंगिक एक अपवाद है, कोई प्रचलन नहीं, वह चाहे पुरुष-पुरुष या स्त्री-स्त्री के बीच हो, पर वह अप्राकृतिक है। साहित्य में इसे इसी रूप में आना चाहिए।"[30]

यहाँ सभी नारी-पात्र पुरुष विरोधी न होकर पुरुष की सत्ता से मुक्ति की आकांक्षा करते है। सारिका वाना को शिवेश के दमन से मुक्ति दिलाकर स्वयं को पहचानने की दिशा में उसे प्रेरित करती है। वह पुरुष विरोधी नहीं, परंतु एक सजग स्त्री है। स्वाभिमानी व रूढ़ संस्कारों से मुक्त। इसीलिए वह वाना को गर्भनिरोधक गोलियां देते हुए कहती है- "जब तक नया शिशु नहीं चाहोगी, तब तक गोलियां लेती रहोगी, शिवेश से कुछ भी कहने की ज़रूरत नहीं है। पुरुष में अपनी निवृत्ति के आगे कुछ भी सोचने का मादा ही नहीं होता।"[31]

वाना भी मुक्तिकांक्षी बन जाती है। शिवेश के साथ घुटन भरी जीवन परिस्थितियों को सहते-सहते वह आत्मसजग हो जाती है। बरसों से प्रेमपूर्ण, सम्मानपूर्ण व सुविधापूर्ण अर्थवान जीवन जीने की आकांक्षी वाना शिवेश की अनुपस्थिति में राहुल के प्रति तन-मन से समर्पित हो जाती है। राहुल इस संबंध को सहज ही स्वीकार लेता है, क्योंकि उसे सदा से वाना से सहानुभूति रही और साथ ही उसके प्रति एक सहज आकर्षण भी उसे बरसों उद्वेलित करता रहा, परन्तु वह अपने मित्र शिवेश के वैवाहिक जीवन में कभी बाधा न बनना चाहता था। राहुल द्वारा वाना के साथ संबंध स्वीकारने का मजबूत आधार बनता है। ड्रग व्यापार में संलिप्त शिवेश का पुलिस की गिरफ्त से बचने के लिए अचानक लापता हो जाना। राहुल शिवेश से फोन पर यह बात सुनकर वाना व उसके बच्चों को पुलिस की ज़हमत से बचाने के लिए उन्हें दूसरे शहर ले जाता है और वाना के प्रेम और देह समर्पण को स्वीकारने के बाद

उसे शिवेश के संबंध में सब कुछ बता देता है। ऐसी स्थिति में वाना क्या करे? छह महीनों तक शिवेश का कुछ पता नहीं चलता। राहुल को आस्ट्रेलिया में नई नौकरी मिल जाती है। वह वाना से साथ चलने का आग्रह करता है। वाना एक बार फिर अन्तर्द्वन्द्व में उलझ जाती है। वह राहुल के साथ सुरक्षित महसूस करते हुए भी सामाजिक तौर पर स्वयं को शिवेश के साथ बंधा महसूस करती है। उसे अमरीकी संस्कृति में पल रहे अपने दोनों बेटों से आशा है कि वे उसका राहुल के साथ संबंध स्वीकार लेंगे, लेकिन वह स्वयं अपने संस्कारों के फलस्वरूप शिवेश से मुक्त होने का साहस नहीं जुटा पाती। उसकी स्थिति 'त्रिशंकु' की सी है- "वाना आखें पसार-पसार कर अपने चारों ओर देखती है। उसका राहुल के साथ चला जाना ही ठीक है। हर दृष्टि से वह यह भी जानती है कि उसका स्वार्थ है। यहाँ से दूर नए महाद्वीप में, बिना किसी चिन्ता या अतीत के यह नया पृष्ठ, नया अध्याय। पर अतीत है, सत्य है कि वह शिवेश से बंधी हुई है और जब उनका पता-ठिकाना भी नहीं, वह इस संबंध के यथार्थ को कैसे झुठला दे।"[32]

उपन्यास में वाना के राहुल से गर्भवती होने की घटना बड़े सहज रूप में घटती है। वाना बिना कुछ सोचे-समझे नए शिशु की प्रतीक्षा में है। यहाँ तक कि वह मेलबोर्न जा चुके राहुल से भी यह बात सांझा नहीं करती। एक ओर वाना का राहुल के साथ जीवन बिताने का निर्णय लेने और शिवेश की पत्नी होने का द्वन्द्व चित्रित है और दूसरी ओर राहुल को बताए बिना उसके अजन्मे शिशु को स्वीकार करने का साहस। दोनों घटनाएं बिल्कुल एक दूसरे के विपरीत हैं। राहुल के प्रति वाना की सम्पूर्ण स्वीकृति जीवन परिस्थितियों की तुलना में एक 'आसान विकल्प' की तरह प्रतीत होता है, जहाँ संघर्ष के लिए कोई अवकाश नहीं है। सुख-सुविधाएं, वर्षों से राहुल के प्रति पलता आकर्षण और शिवेश की अनुपस्थिति में राहुल से प्रेम-संबंध की स्वीकारोक्ति सभी कुछ औपन्यासिक 'तनाव' को एक अति साधारण और आसान विकल्प से 'ट्रीट' करने का प्रयास जान पड़ता है, जो वाना की मुक्तिकामी व संघर्षरत छवि पर प्रश्न चिन्ह लगाता है। सात महीनों बाद घर लौटे शिवेश का वाना द्वारा उपेक्षित होने पर आत्महत्या करना बची-खुची उलझन को भी समाप्त कर देता है। यह घटना वना के लिए एक 'जस्टीफिकेशन' भी बन जाती है। वाना ने शिवेश को हमेशा एक गैरजिम्मेदार व्यक्ति के रूप में जाना है। शिवेश की मृत्यु के बाद आत्मग्लानि के बोध से उबरने के लिए राहुल का प्रेम वाना के लिए सहायक सिद्ध होता है- "घर पर कुछ लोगों का आना-जाना, सहानुभूति, सांत्वना, वाना इसके परे चली गई है। कितना बड़ा दोष, कितना बड़ा लांछन शिवेश उसके गले डाल गए हैं। आत्महत्या करने वाले पति की गर्भवती विधवा-कुछ तो कारण रहा होगा, जैसा वह केवल फुसफुसाहटें सुन सकती हैं; ऐसे तो कोई बेवजह फांसी नहीं लगा लेता,कारण केवल एक? दोषी केवल मैं?" वाना अपने आप से कहती है। जैसे उनका सात महीने से फरार रहना, उनके नाम का वारंट, उनके पीछे पुलिस और ड्रग सप्लाई करने वाले लोग, उनका असंयमित मानसिक संतुलन, इनका कोई भाग नहीं था।"[33]

वाना की सम्पूर्ण संघर्षरत मुक्ति की यात्रा अंततः एक आसान रास्ते 'राहुल' पर आकर समाप्त हो जाती है। उसका अपनी सहेली अंजी के समक्ष यह स्वीकार- "मैं कब से एकाधिक स्तरों पर जीती आई हूं। पत्नी, माँ जो मेरी शिक्षा रही। पर अन्दर की स्त्री, जो हमेशा इस शान्त मुखाकृति के भीतर रेस्टलैस, खोज में व्यस्त, इधर-उधर भटकती रही। अब यह बेईमानी और नहीं चल पाएगी अंजी; में कब तक अपने को ठगती रहूंगी। कब तक अपने 'स्व' को अपूर्ण रखूंगी।" यह कथन यह संकेत देता है कि वह अपने लिए कोई सकारात्मक और अर्थवान विकल्प खोजने में सफल रहेगी। वाना की मुक्ति यात्रा शिवेश से मुक्त होकर दाम्पत्येतर संबंध के रूप में राहुल को स्वीकार कर दूसरे पुरुष की तलाश पर जाकर समाप्त हो जाती है। महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या स्त्री-मुक्ति का सोपान पुरुष की निर्भरता से परे भी रेखांकित हो सकता है?

रोहिणी अग्रवाल में अनुसार- "वाना के स्खलन के मूल में अमेरिका समाज के अलक्षित प्रभाव को महसूसा जा सकता है। आंकठ भोग-लिप्सा में डूबी वाना के पास आत्मस्थ होने का न अवकाश है न संस्कार। गति में सम्मोहन और रोमांच में वह दौड़े चली जा रही है, लेकिन कहाँ जा रही है, उसे मालूम नहीं। इसलिए प्रतिस्पर्धी दुनिया में कदम रखते ही वह 'व्यक्ति' न रहकर व्यवसाय को संवर्द्धित करने वाला एक 'उत्पाद' बन जाती है। अपने 'कामिनी' रूप से ग्राहकों का लुभाने-रिझाने वाली रूढ़ स्त्री छवि। यानी आत्मोन्नयन एवं आत्मसार्थकता की तलाश में सारी जद्दोजहद के बावजूद 'भोग्या' के उसी दलदल के धंसाव में। वाना बाज़ार के दबावों तले शोषित स्त्री-

अस्मिता का उदाहरण बन सकती थी। यदि लेखिका 'नई कहानी' वाली अपनी अति परिचित जमीन और संस्कार से ऊपर उठकर उसे निपट अकेले बाज़ार की क्रूरताओं से टकराने का अवकाश देती।"[35]

'अन्तर्वशी' उपन्यास के माध्यम से उपन्यासकार स्त्री-मुक्ति से जुड़े महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाए हैं। दो अलग-अलग देशों की संस्कृति के बीच संघर्ष करना भी इस उपन्यास के केन्द्र में है। मुक्ति ध्वज की वाहिका वाना अपने अर्थहीन व निराशापूर्ण जीवन के कारण अपने अस्तित्व के प्रति सजग होती हुई निरंतर मुक्ति की तलाश में प्रयासरत दिखाई गई है। अंग्रेज़ी सीखना, आत्मनिर्भर होना, पति शिवेश की इच्छाओं की कठपुतली बनने से इन्कार करना इत्यादि सभी प्रयत्न उसके संघर्ष व उससे उबरने के परिचायक हैं, लेकिन अंततः राहुल को स्वीकार कर एक सुविधापूर्ण व सरल जीवन राह में जीवन की सार्थकता की खोज वाना को उसी परम्परावादी साधारण स्त्री के रूप में चित्रित करती है, जो पुरुष में ही 'स्वत्व' की पूर्णता पाना चाहती है। दो संस्कृतियों के बीच का रचनात्मक तनाव इस उपन्यास को प्राणवत्ता देता है, उपभोक्तावादी-बाजारवादी संस्कृति की परिणति को मानवीय संबंधों के घरातल पर उद्घाटित करता है, नारी मनोविज्ञान में 'अस्मिता की सार्थकता' को पुरुष वाली 'परिपूर्णता की अवधारणा' से टकराता है और फिर उसी में अपनी सार्थकता ढूंढते हुए एक साथ तमाम प्रश्नों को स्त्री और दाम्पत्य के केन्द्र से उठाकर अनसुलझा छोड़ जाता है।

सहायक ग्रंथ सूची

1. रोहिणी अग्रवाल, समकालीन कथा साहित्यः सरहदें और सरोकार, आधार प्रकाशन,पंचकूला (हरियाणा) सन् 2007, पृ.184
2. उषा प्रियंवदा, अन्तर्वशी,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2004, पृ.155
3. वही, पृ.18
4. वही, पृ.18
5. वही, पृ.75
6. वही, पृ.70
7. मृदुला गर्ग (कठगुलाब) उद्धृत, रेखा कस्तवार, स्त्री चिंतन की चुनौतियां, राजकलम प्रकाशन,नई दिल्ली, संस्करण 2006, पृ. 248
8. उषा प्रियंवदा, अन्तर्वशी, पृ.55
9. वही, पृ.55-56
10. वही, पृ.61
11. वही, पृ.61-62
12. रेखा कस्तवार, अकेली स्त्री (लेख) उद्धृत (सं.) प्रो० कमला प्रसाद, स्त्री: मुक्ति का सपना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2005, पृ.107-108
13. उषा प्रियंवदा, अन्तर्वशी, पृ.60-61
14. वही पृ.58
15. वही, पृ.61-62
16. वही, पृ.68
17. वही, पृ.71-72
18. वही, पृ.75
19. वही, पृ.23
20. वही, पृ.90
21. वही, पृ.90
22. वही, पृ.89-90
23. राजकिशोर, स्त्री पुरुष कुछ पुनर्विचार, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,संस्करण 2000, पृ.25
24. राजकिशोर, स्त्री पुरुषः कुछ पुनर्विचार, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2000, पृ.44
25. श्री नरेश मेहत्ता, मुक्तिबोधः एक अवधूत कविता, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 1998, पृ.82
26. रेखा कस्तवार, स्त्री चिंतन की चुनौतियां, पृ.238
27. उषा प्रियंवदा, अन्तर्वशी, पृ.98
28. वही, पृ.111
29. प्रभा खेतान, उपनिवेश में स्त्री, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 2003, पृ. 145
30. नामवर सिंह, 'मुक्त स्त्री की छद्म छवि' (लेख) उद्धत (सं.) प्रो० कमला प्रसाद, स्त्रीः मुक्ति का सपना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2005, पृ.517
31. उषा प्रियंवदा, अंतर्वशी, पृ.50
32. वही, पृ.226
33. वही, पृ.247

34. वही, पृ.238
35. रोहिणी अग्रवाल, समकालीन कथा साहित्यः सरहदें और सरोकार, आधार प्रकाशन,पंचकूला (हरियाणा) सन् 2007, पृ.186